साहित्यसुधा
साहित्यकारों की वेबपत्रिका
साहित्यकारों की रचना स्थली
वर्ष: 3, अंक 45, सितम्बर(द्वितीय) , 2018

गुजराती कहानी-
ग्वालिन

लेखक: मलयानिल
अनुवादक: डॉ. रजनीकान्त एस.शाह

वह बहुत जवान थी। कइंयों के तो चौदहवे वर्ष में अधर पर गुलाब दिखता है। कुछ के तो सत्रहवे-अठारहवे वर्ष में आँखों में चमक आती है। उसे तो पंद्रहवे वर्ष में कंठ में कोयल कुहुकती थी।निर्दोषिता अब विदा होने लगी थी। बालभाव अब यौवन को रास्ता दे रहा था। खिलती हुई कली अब तंग हो रही थी।

पढ़ी नहीं थी फिरभी चतुराई थी,शहराती नहीं थी तथापि सौजन्य था। उच्च वर्ण की नहीं थी,फ़िरभी गोरी थी।

माथे पर पित्तल की चमचमाती बटलोई रखकर सिवान से गाँव में दाखिल होने पर मानो लक्ष्मी ने प्रवेश किया। `दूध लेना है-दुधो' की टूहुक गली गली में सुनाई दे और दातुन कर रहे सब उसे देखते थे। पुरुषों को तो शुभ शगुन होते थे। स्त्रियाँ ईर्ष्या करती थीं।

वह गुजराती ग्वालिन थी सुबह तड़के तालाब में नहाने के लिए अपने गाँव से निकलती थी। ताजा दुहा दूध शहरियों की सेवा में पेश करती थी। सबको उससे दूध लेने की चाह रहती थी।`दूध लेना है दूध' सुनते ही मुहल्ले की स्त्रियाँ बिछौना छोड़ देती थी।

वह हमेशा लाल साड़ी-मोटी पर एकदम नयी सम्हालकर पहनती थी। उसे पीली पट्टी की किनारी थी और काला पल्लू था। हाथ में हाथीदांत के रुपे की चिपटी पट्टीवाली भारी चुड़ियाँ पहनती थी। पैर में मोटे कड़े पहनती,नाक में नथनी और कान में नखली,उंगली में रुपे के वेढ़, गले में टुंपिया(तंग माला) और कंठी। ये उसके आभूषण थे। माथे पर घूँघट रखती थी। इसलिए उसके बाल कैसे होंगे इसका किसीको पता नहीं था।वह बाल कंघी करती भी होगी,मांग में कुमकुम भरती होगी,यह कल्पना ही उसकी खूबसूरती में इजाफा कर देती थी।

मन उसके आने की वेला में चौकी पर बैठकर दातुन करता था। वह बेचारी लाज आने पर शरमाकर,नजरें नीची कर देती थी लेकिन अन्य नववधू की तरह उसकी चाल में कोई बदलाव आता नहीं था,रोमांच रुकता नहीं था। हाथ टेढ़े-मेढ़े उछलते नहीं थे। शांत और गंभीरता लिए हमेशावाला `दूध लेना है,दू-धा।' की आवाज लगती रहती थी।

मैं अपनी पत्नी से रोज कहता था,कि ``तुम इस ग्वालिन से दूध क्यों नहीं लेती हो? हमेशा बहन! दूध लेना है' कहते कहते उसका मुंह दु:खने लगता है और तुम्हें उसकी जरा भी परवाह नहीं है।''

पता नहीं क्यों? पर जब से उसे देखा है तब से मेरे दिल में उसके लिए कुछ अजीब सा भाव उत्पन्न हो गया था। जबरन भ मैं उससे दूध खरीदवाता था। उसे कुछ देर मैं अपने आंगन में बैठाता था और मैं उसे अपनी तरफ देखने के लिए मौका खड़ा करता था। ऐसी कोमलांगी ग्वालिन क्यों पैदा हुई! उसके कोमल से बदन पर इतना मोटा वस्त्र कैसे ठहरता होगा?ईश्वर भी बिना देखे ही जन्म देता है न!

उस दिन मुझे हुआ, कि यदि मैं ग्वाला जन्मा होता तो ठीक रहता! मुझे तालाब के किनारे पर खड़े रहकर बांसुरी बजाना आता होता तो अच्छा रहता। ढोर डँगरों को हाँकते हुए गाँव के सीवड़े पर लाठी के सहारे शरीर टिकाये माथे पर बड़ा मुरेठा बांधे गीत गा रहा होता तो और सुहाता। गाँव का वह जीवन भी कानुडा का जीवन था। पागल कर देनेवाली ग्वालिन भी राधा की जातवाली!

बारबार उसका सौन्दर्य देखते रहने के कारण मेरे मन पर बुरा असर हुआ। उसकी गंभीर फिरभी कजराली आँख पर मेरा दिल आ गया। उसके पीछे मैं गली में भटकूँ और वह कहाँ जाती है,यह देखूँ।- हृदय ऐसी तरतीब करने लगा।

एक दिन तो जैसे ही आठ का गजर हुआ कि मैं ऊठा और यहाँ वहाँ जाना छोडकर गाँव के दरवाजे पर जाकर खड़ा हो गया। दूध बेचकर घर लौटने के लिए अभी आएगी तब अनजान होकर मैं उसका पीछा करूंगा। मौका हाथ लगते ही मैं तुरंत उससे पूछूंगा कि तुम कौन हो? तुम्हारी ये आँखें क्या हैं? तुम ग्वालिनों की जात-बिरादरी में मदहोश कर दे ऐसी परियाँ भी हैं?

सवालों की तरतीबवार योजना करते हुए मैं दरवाजे जा खड़ा हुआ। ऐसे में दोनों हाथ से पैसे गिनती हुई,खाली बटलोइयाँ माथे पर अधर रखे, गरदन सीधी पर झुकी हुई नजर रखकर चलती हुई वह दरवाजे के बाहर निकली। मैं भी उसके पीछे पीछे चलने लगा।

गाड़े की लीक बनी हुई थी। ऊंची चढ़ाईवाली जमीन से रास्ता निकाला हुआ होने से आजूबाजू में मिट्टी की दीवारों जैसा हो गया था और ऊपर करील और गुँजे जैसी वनस्पतियाँ उग आई थीं। लीक के बीच रही धूल-मिट्टी उडाती हुई वह तेज गति से चली जा रही थी। सूर्य सामने होने के कारण एक हाथ ऊपर किया हुआ था और दूसरे हाथ से बटलोई सम्हाले हुए थी। एकाधबार यकायक पीछे देखने के कारण मुझे देखा भी था और मैं उसके पीछे चल तो नहीं रहा था,ऐसा उसे वहम भी हुआ था। इसलिए कभी धीमे तो कभी तेज गति चल रही थी। मैं भी उसी तर्ज पर अपनी चाल बदल रहा था। मुझे मालूम नहीं है कि वह ठगिनी अपना वहम सही है या नहीं,यह जानना चाहती है। अलबत्ता,मैं उसकी पवित्रता या उसके चरित्र को दूषित करना चाहता नहीं था। मैं उसके रूप से चौंधिया गया था। मैं मन से तो भ्रष्ट हो ही गया था,फिरभी अभी दिमाग कुछ काम तो कर ही रहा था, अत: होश गँवाकर मैं अनुचित वर्तन करूँ उस हद तक पगलाया हुआ नहीं था।

इस तरह हम करीब आधा मिल चले होंगे,कि वह रुक गई। वहाँ बरगद की घटा थी। उसके नीचे बटोही को सुस्ताने के लिए मड़ई बनायी हुई थी। ऊपर कोयल की टूहुक,नीचे बछड़े,बकरियाँ,गाय,भैंस,यहाँ वहाँ घूमते रहते। जगह बड़ी रमणीय थी।

मड़ई के बाहर उसने बटलोई उतारीं और रास्ते के बगल में बिछी हरियाली पर वह ``हाश,राम कहकर उकड़ूँ -ग्वालिनें जिस तरह बैठती हैं,ऐसे बैठ गई।

मेरी दशा विचित्र हो गई। मैं चला जाऊँ या खड़ा रहूँ? बात करने का खयाल आते ही मेरी धड़कनें तेज हो गईं। मेरे मुख पर लाली दौड़ गई। साहस करके वहाँ तक गया तो था, पर इस ग्वालिन ने मेरी ताकत ही हर ली थी।

विचार करते हुए मैं उसी रास्ते चलने लगा। उसे पार करके मैं दो कदम आगे निकला कि `संदन(चन्दन)भई, ऐसे कहाँ जा रहे हो? उसने पूछा। वह मेरे यहाँ रोज आती थी, इसलिए मुझे जानती थी,पर एकाएक मेरे साथ बोलने लगेगी,ऐसा ख्याल नहीं था। क्या वह उसके पीछे ही आ रहा था,ऐसा समझ गई होगी? मेरे बारे में वह क्या सोचती होगी? इस प्रकार मुझे अनेक विचार आने लगे। फिरभी उसके प्रश्न का जवाब तो मुझे देना ही चाहिए। क्या जवाब दूँ?मैं तो घबराहट में बोल ऊठा: ``तुम्हारा गाँव देखने''- कहने के बाद विचार आया कि मैंने यह क्या कह दिया? उसके गाँव को देखने से मेरा क्या प्रयोजन? अब उसने मेरे मन की दुर्बलता को भांप लिया होगा। शायद उसकी इच्छा के विरुद्ध होगा और यदि वह किसी से कहेगी कि संदनभई मेरा गाँव देखने आए थे।'' तो? पर तुरंत उसने पूछा ``इसमें क्या देखना है? वह कोई आपके गाँव जैसा नहीं है। लो, यहाँ आओ और तनिक मेरा दूध तो पियो। बकेना भैंस का है। इसका स्वाद आपको याद रह जाएगा।''

मेरी उलझन खत्म हुई। मेरे ऐसे व्यवहार से उसे अच्छा नहीं लगे ऐसा कुछ हुआ नहीं था। उल्टे वह खुद मुझे बुला रही है। इसलिए मैं उसकी नजरों में गिर जाऊंगा,ऐसा कुछ नहीं था। यदि गुलाब बुलबुल को बुलाये तो बुलबुल का क्या कसूर? यदि नाग खुद मुरली के पास जा बैठे तो उसमें संपेरे का क्या दोष?अब जो होना है,होने दे।

``न,न, ऐसे तुम्हारा दूध थोड़े ही पिया जाता है? कल घर दे जाना।'' पीने का मन तो बहुत था पर ऐसे पहले ही बोल में मैं पी लूँ तो विचित्र ही लगे न?

``अरे,अब घर तो लोगे तब लोगे पर यहाँ तो पियो। वहाँ कहाँ बरगद की शीतल मीठी छाया होगी? पंखी ऐसे मीठे गीत गाते होंगे? और वहाँ क्या मेरे हाथ से आपको दूध मिलेगा? वहाँ तो बहन जानेगी तो पता नहीं क्या होगा? ''

कोई उसे अपढ़ कहे तो इसका मतलब तो यही कि उसे अक्षरज्ञान नहीं है। कोई उसे कहे कि उसे बोलना नहीं आता तो उसका मतलब यह कि उसकी शहर में बोली जानेवाली टीपटापवाली बोली नहीं है। कुदरत की गोद में वह पनप रही थी। कुदरत का स्वाद वह पहचान सकती थी और अपने ग्राम्य मगर मधुर आवाज में उसका अहसास मुझे करा सकती थी। ऐसे में-एकांत में हृदय

की सरलता के साथ मन के सारे भाव प्रभावित हो ऐसे बता सकती थी। मैं तो हर क्षण इंतजार कर रहा था।

``ठीक है, दूध तो पीऊँ, लेकिन पैसे ले तो।''

``कहीं पागल तो नहीं न हो गए हैं ? ऐसे थोड़े ही न पैसे लिए जाते हैं! मेरी कसम नहीं पिया तो।'' कहते हुए मैं पास ही खड़ा था, अत: कुछ उकडू होकर मेरे आगे दूध से भरा प्याला धर दिया। मैंने सोचा,ज्यादा खींचातानी छोड़ो,दिखावा करोगे और चाहते हुए भी नखरे बघारोगे तब तक तो बात खत्म हो जाएगी। मैंने उसके हाथ से दूध नापनेवाला प्याला लिया और दूध पी गया। वह शर्करा मिला दूध नहीं था और न ही गरम किया हुआ फिरभी मुझे बहुत स्वादिष्ट लगा। दूध तो वैसे भी स्वादिष्ट होता है। जो लोग ताजा दुहा हुआ दूध पीते हैं वे ऐसे दूध की मिठास से अवगत होते हैं,इस पर यह तो रूपसी के हाथ का,उसके आग्रह का-और वह भी एक बेहोश को पीने के लिए मिला हुआ!

``ग्वालिन! तुम्हारी जात? '' दूध पीते हुए बात का डोर सम्हाला।

``लो,आप तो जाति भ्रष्ट हुए।''

``ना ना! मैं इस आशय से नहीं पूछ रहा। जानकारी के लिए पूछ रहा हूँ। कहो तो सही,तुम किस जाति की हो? ''

`` हम तो चरवाहे रबारी लोग हैं।''

``तो तुम ब्याहता हो या कुंवारी? मेरी सनक अब बढ़ रही थी।

कुछ लजाकर उसने कहा `ब्याहता।'

``किस के साथ?''

``जाओ संदनभाई नाम तो कहीं लिया जाता है,भला? हमारे जैसे ही किसी रबारी के साथ।''

`` प्रेम क्या है, क्या तुम यह समझती हो?'' मैं तो अपना होश ही भूल चुका था। क्या पूछें और क्या नहीं पूछें ,इसकी कोई सुध ही नहीं रही थी। मैंने जो पूछा,उसे क्या वह समझी भी या नहीं।

``क्या?''

``तुम प्रीति क्या है,यह जानती हो?'' क्या तुम्हें तुम्हारा वर चाहता है?''

``संदनभाई कहीं पागल तो नहीं हुए?''

``ना,बस,मुझे कहो। मैं तुम्हारे पीछे यहाँ तक आया हूँ। गली में बात करने से डर लग रहा था। बोल,अब तुम मेरे संग बातें नहीं करोगी तो तुम्हें मेरी कसम।'' कहकर मैं उसके सामने बैठ गया।बीच में दूध की बटलोइयाँ पड़ी थी।

एकाएक ``हा...य! अपनी डलिया भूल आयी! हाय हाय!'' सुनकर मैं चौंक गया। वह खड़ी हुई,``संदनभाई! आप बैठो और मेरी बटलोई पर नजर रखना।अपनी कुशकी(धान के छिलके) की हुंल्ली(डलिया) कहीं छोड़ आई हूँ। अभी गई नहीं कि वापस लौट आती हूँ।''

``क्यों नहीं? वह यदि दिनभर धूप में बैठने के लिए कहे तो भी मैं तैयार था, तो कुछ देर का तो सवाल ही कहाँ उठता है?

``हाँ हाँ हाँ जा ले आ,मैं इस मड़ई में बैठा हूँ।'' रास्ते में बैठा हुआ यदि कोई मुझे देखे तो कहेगा कि क्यों यहाँ बैठा होगा? बटलोइयाँ लेकर मैं मड़ई में बैठा। अंदर किसी ने घाँस डालकर बिछौना बनाया था। उपर साँठ का छाजन छाकर बबुल की शाखाओं के खंभे बनाए थे। पीछेवाली दीवार में खिड़की थी। दीवार के सहारे मैं पैर फैलाकर बैठा। वाह रे वाह गोरी ग्वालिन तुम्हारी गंवई भाषा में मधुरता! बस,आज तो उसे जाने ही नहीं दूंगा। बातों में उलझाकर उसे घर भूलवा दूँ।देखते हैं,वह मुझे वह गायें चराना सिखाती है? उसने यदि झीनी(बारीक) साड़ी, तंग चोली और रेशमी घाघरा पहना होता तो वह कैसी दिखती! जुड़े में गुलाब खोंसा होता, गले में मोती की एक माला पहनी होती और इसी मदमस्त चाल से वह चल रही होती तो वह किसे भुलावे में नहीं डालती? - कल्पनाएं जोड़ जोड़कर मैं उसके रूप को अधिक मोहक बनाए जा रहा था और उसी कल्पना के चित्र के साथ मैं ज्यादा से ज्यादा मोहित होता जा रहा था। उसकी बटलोइयों पर कुछ नाम खुदा हुआ था। उसे मैं देखने लगा। अस्पष्ट अक्षरों में `दली' ही पढ़ा जाता था। इस पर से मैंने माना कि `दली' उसका नाम होगा। क्यों स्त्री का नाम? शायद माइके से ससुराल जाते वक्त उसे ये बटलोइयाँ उसके माता-पिता ने दी होंगी। उसने अंदर और बाहर से कितना स्वच्छ रखा है! दूध को शोभा प्राप्त हो और अच्छा भी लगे इसमें क्या आश्चर्य?बटलोई के कारण दूध भी अच्छा लगे।माथे पर रखने की गेंडुरी अपने साथ वह क्यों नहीं ले गई? जब बटलोई माथे पर बिना सहारे रखकर जब वह गाँव में आती है तब क्या उसकी आवाज! प्रभाती वेला में जैसे प्रभाती गीत मीठा लगता है,उसी प्रकार उसकी झंकार मीठी लगती है। इससे अर्द्धजागृत अवस्था में सुबह का शुभ सकुनवाला सपना आता है और पूरा दिन आनंद से बीत जाता है। सारे गाँव के लिए वह आशीर्वाद रूप देवी थी।

इस प्रकार सोचते हुए बीस मिनट बैठा होगा कि वह आ गई और ``बैठे हो?'' इतना ही पूछा।

``क्यों डलिया मिली?''

``ना रे बई(बाई)! चार-पाँच घर पूछा लेकिन कहीं कोई पता नहीं। पता नहीं मैं किसके घर रख आई? इस वक्त मैं कहाँ कहाँ भटकूंगी? कहकर वह मानो निराशा अनुभव करती हो ऐसे बैठ गई।

``दली?''

``दली'' कहते ही वह चौंकी; ``गाँव में तो लोग मुझे दूधवाली कहते हैं।''

``देख ,तुम्हारी इस बटलोई पर लिखा है। वह तुम्हें अपने पीहर से मिली थी ना ? तुम्हारी शादी के वक्त।''

मैं तो उसी में तन्मय था इसलिए मैंने अलग अलग अनुमान कर रखे हों तो उसमें क्या आश्चर्य?

`तुम्हारा वर दुहाजू लगता है?'' गले में `शोकपगलु'(सौत कहीं कष्ट न देने लग जाए,इसके कहर से बचने के लिए एक तावीज स्त्री द्वारा पहना जाता है।)-तावीज देखकर मैंने पूछा।मेरी नजर उसके गौर मुख पर जाते ही उसने साड़ी को ऊपर की तरफ खींचा।

``तुम और तुम्हारा वर दिनभर क्या करते रहते हो?''

``क्या ज़िंदगी है?'' कहकर टेढ़ा देखकर हंसी। दांतों की कलियाँ साड़ी में छिपाते हुए हंस दी।

``ना,ना,कह तो सही। सुबह से लेकर शाम तक आप क्या क्या काम करते रहते हैं,इतना बताती जाओ।''

``क्या करते होंगे?मवेशियों का काम। सबेरे जल्दी उठ जाते हैं,दातुन-वातुन करके बछड़ों को आँचल देते हैं। वह गायों को दुहते हैं और मैं बकेना को दुहती हूँ। दूध निकालकर घासचारा डालकर हम दोनों निकलते हैं। उस दरवाजे से उस तरफ आता है, मैं आपकी ओर मुड़ती हूँ। दूध देकर मैं यहाँ आकर उसके आने तक बैठती हूँ।''

मैं यकायक घबरा गया। शायद उसका रबारी(ग्वाला) आ रहा हो और मुझे साथ बैठा हुआ देखकर मुझे कहीं आड़े हाथों ले लिया तो? फजीहत होगी,बेइज्जत हो जाऊंगा और पिटाई हो सो अलग। ऐसा विचार आते ही मुंह पर चिंता और भय सवार हो गया और चलते बनने के लिए टोपी हाथ में उठाई।

``आप तनिक भी डरना नहीं। आज तो अकेली ही आई हूँ वह तो आज घी बेचने के लिए गए हैं।'' मुझे राहत हुई और बातचीत पुन: शुरू की:

``तुम्हारा वर बांसुरी में ऐसा तो क्या बजाता है,कि आप सब वहाँ खड़े रह जाते हो? मैं तालाब के किनारे खड़ा रहकर बांसुरी बजाऊँ तो क्या मैं बजा सकूँगा?''

``हाँ,क्यों नहीं बजा सकते? क्या आपको हमारे जैसा होना अच्छा लगता है?''

``मेरे मन में हो रहा है कि दली तुम्हारे लिए ही,दली। तुम जो खाओगी,मैं वही हजम करूँगा तुम्हारी मोटी रोटी। तुम्हारी गायों को चराने जाऊँ। तुम्हारा गाँव अभी कितना दूर है?''

``चार-पाँच खेत की दूरी पर.वह सुपारियाँ जो दिखती हैं ना,वही। क्या आप मेरे घर रहेंगे? हम तो साड़ी की गुदड़ी पर सो जाते हैं। खाट खुले में बिछाते हैं। पास में मवेशी बंधे होते हैं,वे रातभर रंभाते रहते हैं। आप जैसों को तो वहाँ अनुकूल ही नहीं आ सकता।''

``मुझे तो बहुत अच्छा लगता है। ऐसे में तुम्हारे जैसा कोई मेरे साथ हो तो मैं अपने घर जाने का नाम ही न लूँ।''

बातचीत पर से मैं ऐसा ही मानता था कि वह मेरे ऊपर क़ुरबान है। मैं उसका दिल चुरा सकता हूँ और धीमे धीमे वह अपने मन की बात कहने लगेगी। जैसे फूल उघड़ता जाए उसी प्रकार मेरा हृदय भी आशा में खुलता जा रहा था। जिस प्रकार सोता बहता है,उसी प्रकार मेरी कल्पना भी उड़ान भरती थी। केतकी के डोलने की तरह मेरा जीव भी घुमफिरकर उसी में डोलता रहता था। तिनका हाथ में लेकर जमीन पर लकीरें खींचती उसे टेढ़ा करके कमान बनाती,तोड़कर टुकड़े

करती,इस प्रकार वह खेल खेलती रहती थी और घबराहट,भय या शर्म रखे बिना मेरे साथ मित्रवत परिचित होकर बतियाती रहती थी।

कुछ देर हम लोग खामोश रहे,कि जैसे बिजली कड़के और बालक डर जाए,अघोर घंट बजे और वह मालती फड़फड़ाए,आनंद बिखर रहा हो और शोक छा जाए, ऐसे यकायक मड़ई की खुली खिड़की से मेरी पत्नी अंदर मेरी ओर कोपायमान होकर अनिमेष तकती रही।

देखते ही मैं तो थरथराने लगा। उसकी आँखें क्रोधवश पानी से डबडबाने लगी थी। वह क्या कहूँ और क्या नहीं कहूँ,इसी उधेड़बुन में थी। कितना कह डालूँ,वह उभार पर था। फिरभी उसने कुछ नहीं कहा। मात्र मेरी ओर देखती रही। मैंने नजरें झुका ली। दली...धूर्त दली ....साड़ी में मुंह छिपाए हंस रही थी।

चितेरे को यहाँ तीन चित्र चित्रित करने थे: एक कालिका,दूसरा जादूगरनी और तीसरे बेवकूफ का।

संपर्क: 2-`शील-प्रिय',विमलनगर सोसायटी,नवाबाजार,करजण.जिला.वडोदरा,गुजरात.पिनकोड :३९१२४०.मोबाईल: 9924567512.E.Mail id: navkar1947@gmail.com

कृपया रचनाकार को मेल भेज कर अपने विचारों से अवगत करायें